SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

''बच्चन'' की आत्मकथा में साहित्य एवं कला–प्रसंग

विभाषा मिश्र, हिंदी विभाग,
पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author :
विभाषा मिश्र, हिंदी विभाग,
पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर,
छत्तीसगढ़, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 24/09/2020
Revised on : -----
Accepted on : 28/09/2020
Plagiarism : 01% on 24/09/2020

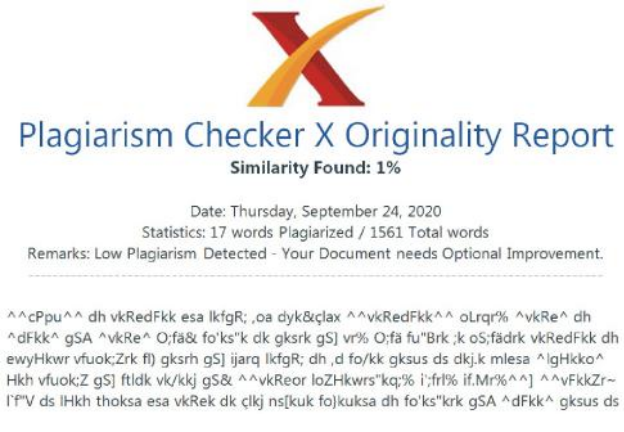
Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 1%

Date: Thursday, September 24, 2020
Statistics: 17 words Plagiarized / 1561 Total words
Remarks: Low Plagiarism Detected - Your Document needs Optional Improvement.

^^cPpu^^ dh vkRedFkk esa lkfgR; ,oa dyk&çlax ^^vkRedFkk^^ oLrqr% ^vkRe^ dh ^dFkk^ gSA ^vkRe^ O;fä& fo'ks"k dk gksrk gS] vr% O;fä fu"Brk ;k oS;fädrk vkRedFkk dh ewyHkwr vfuok;Zrk fl) gksrh gS] ijarq lkfgR; dh ,d fo/kk gksus ds dkj.k mlesa ^lgHkko^ Hkh vfuok;Z gS] ftldk vk/kkj gS& ^^vkReor loZHkwrs"kq;% i';frl% if.Mr%^^] ^^vFkkZr~ l'f"V ds lHkh thoksa esa vkRek dk çlkj ns[kuk fo)kuksa dh fo'ks"krk gSA ^dFkk^ gksus ds

शोध सार

''आत्मकथा'' वस्तुतः 'आत्म' की 'कथा' है। 'आत्म' व्यक्ति– विशेष का होता है, अतः व्यक्तिनिष्ठता या वैयक्तिकता आत्मकथा की मूलभूत अनिवार्यता सिद्ध होती है, परंतु साहित्य की एक विधा होने के कारण उसमें 'सहभाव' भी अनिवार्य है, जिसका आधार है– ''आत्मवत सर्वभूतेषुयः पश्यतिसः पण्डितः'', ''अर्थात् सृष्टि के सभी जीवों में आत्मा का प्रसार देखना विद्वानों की विशेषता है। 'कथा' होने के कारण इसमें सत्य एवं यथार्थ के साथ–साथ कल्पना– तत्व का होना भी जरूरी है– ''सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात''! अर्थात् साहित्य में श्रेय और प्रेय –दोनों का सामंजस्यपूर्ण निवेश होता है। पंकज चतुर्वेदी के शब्दों में, ''कथा का सौभाग्य है कि वह कही जाती है और अभिशाप यह है कि उसे हम कहते नहीं। कहें तो वह औरों के काम की साबित होगी। उनकी सोच और संवेदना का आश्रय पाकर उसकी सार्थकता विकसित होगी। कहीं जाकर वह अपनी मुक्ति भी बनती है। सामाजिक जीवन की जटिलता और रहस्यमयता– उसके दुःख के अँधेरे कोनों और उसके सुख के निभृत स्रोतों को संश्लिष्ट दुनिया के साक्षात्कार तक हमें आत्मकथा ही ले जा सकती है।''

मुख्य शब्द

आत्मकथा, सृष्टि, साहित्य।

हिंदी–आत्मकथा–साहित्य में गुणवत्ता की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट स्थान हरिवंशराय 'बच्चन' की आत्मकथा को मिला है, जो चार भागों में भिन्न–भिन्न वर्षों में प्रकाशित हुआ :

भाग 1 : 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ'–1969
भाग 2 : नीड़ का निर्माण फिर'–1970
भाग 3 : 'बसेरे से दूर' –1977
भाग 4 : 'दश द्वार से सोपान तक'–1985

इन चारों खंडों को समग्रता से देखा जाए, तो यह आत्मकथा 'बच्चन' की सभी रचनाओं में श्रेष्ठ कही जा सकती है, जिसमें कवि की सुदीर्घ जीवन–यात्रा के विभिन्न सोपानों के बीच तारतम्य है। उनकी यह जीवन–यात्रा बहुआयामी है, जिसमें साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक समस्याओं पर राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपने अनुभवों को रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। शोध, समीक्षा और सृजन की त्रिवेणी में बच्चन की आत्मकथा, पत्र, डायरी, रेखाचित्र, साक्षात्कार, रिपोर्ट, संस्मरण, निबंध, जीवनी–सभी को यथा प्रसंग आत्मसात करती है।

प्रत्येक 'कला' व्यक्तिगत निर्मित होती है, परंतु उसकी सार्थकता वस्तुगत होने पर ही है, तभी वह समाजोपयोगी होती है। साहित्य की रंग–रेखाएँ समाज में ही जन्म लेती हैं।

वैयक्तिकता और निर्वैयक्तिकता के द्वंद्व से ही आत्मकथा का सृजन होता है, अतः उसकी अंर्तवस्तु केवल 'स्व' या 'निज' तक सीमित न होकर 'सर्व' को भी आत्मसात कर लेती है। इस प्रकार आत्मकथा में उन सब तत्वों, परिस्थितियों, कारणों का समावेश अभीष्ट होता है, जिनसे आत्मकथाकार का व्यक्तित्व रूपायित हुआ। इसमें उसके जन्म से लेकर आत्मकथा–लेखन पर्यंत उन व्यक्तियों, स्थितियों, संदर्भों, घटनाओं का अंतर्भाव भी स्वमेव हो जाता है।

'बच्चन' ने यह स्वीकार किया है कि ''मैं अपने आपके सामने ऐसा प्रस्तुत करूँ कि मुझमें आप अपने को भी देख सकें, और मैं अपने सामने ऐसा प्रस्तुत करूँ कि उसमें मैं आपको भी देख सकूँ।''

काव्य या साहित्य (रचनात्मक साहित्य) भाषिक कला है। मनुष्य के यहाँ कला कोई बाहरी तत्व न होकर, जीवन की पूर्णता का आत्मिक अनुष्ठान है–कला कला के लिए नहीं, कला जीवन के लिए है। 'बच्चन' कला के संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखते हैं :

''कला अनुभूतियों का किसी इन्द्रिय ग्राह्य माध्यम में रूपांतरण है। हर मानवीय अनुभव की अपूर्णता कला के माध्यम से वह पूर्णता प्राप्त करती है, जो मनुष्य को अधिक–से–अधिक संतोष देती है। शोक की अनुभूति से शोक –गीत रचना, और शोक–गीत से आंनद–संतोष और शांति की उपलब्धि कर लेना विष को मधुर सा बना देता है, और यह कला का सबसे बड़ा चमत्कार है।''

इसके विपरीत, ''किसी भी समाज भोगी स्थिति को अपनी बौद्धिक सहानुभूति देकर प्रचारात्मक लेखन संभव है, पर सृजनशील लेखन तब तक संभव नहीं हो सकता, जब तक लेखक समाज–भोगी स्थिति को आत्मभोगी न बना ले।''

जीवन है, तो मनुष्य अपने को कटु–मधु अनुभूतियों के भार से विमुक्त नहीं कर सकता। पर इस भार को वहनीय और सुखद भी बना देने में सबसे अधिक योगदान, मैं समझता हूँ, कला ने दिया है।

बच्चन ने अपनी आत्मकथा में अपने जीवन के कठिन क्षणों में अनेकशः इस तथ्य को स्वीकार किया है कि ''मुझे प्रकृतिस्थ होने में सबसे अधिक योग शायद मेरी कविता ने दिया।''

कला में जो शक्ति है, वह धर्म और दर्शन की शक्ति से भिन्न है और कम नहीं है। ''धर्म और दर्शन ने प्रायः उनसे ऊपर उठ जाने की शिक्षा दी है, कला ने उन्हें साथ लेकर चलने की। धर्म और दर्शन की दुहाई देकर भी विशिष्ट और विरले ही सुख–दुःख के ऊपर उठ सके हैं। सामान्य मानव को कला ने ही संभाला है, कला ही उसकी जीवन–यात्रा की संगिनी रही है, संबल भी बनी है।

कला का लक्ष्य क्या है? इस विषय पर बच्चन का अभिमत उल्लेखनीय है :

''कला का लक्ष्य ही यह है कि जो व्यक्तिगत है, सीमित है, आत्मभोगी है, उसे सर्वगत, सार्वभौम और सर्वभोगी बना देना।''

पंडित नरेंद्र शर्मा की काव्य–शैली के बारे में लिखते हुए 'बच्चन' कहते हैं कि ''पंतजी के समान ही अपने काव्य –जीवन के अंतिम चरण में वे दर्शनानुगामी होते जा रहे हैं, जबकि कवि को आदि से अंत तक जीवनानुगामी

होना चाहिए।''

बच्चन के कवि–अध्यापक व्यक्तित्व में 'कवि' सर्वोपरि है, यद्यपि वे अध्यापक –रूप में भी सफल रहे। वे कहते हैं कि ''मैं अपने जीवन में अपने भावक और सर्जक को अधिक महत्व देता हूँ, बनिस्बत अपने अध्यापक के। अपने कवि–व्यक्तित्व से अपनी अधिक निकटता अनुभव करने की बात शायद गलत नहीं है। मनुष्य का व्यक्तित्व उसके भाव–लोक के इर्द–गिर्द ही अधिक सघन और सच्चा होता है, इससे शायद ही कोई इंकार कर सके।''

'बच्चन' ने अपनी आत्मकथा लिखते हुए यह भी स्वीकार किया है कि ''जिसे मेरा व्यक्तित्व कहा जा सकता है, उसमें कवि–अकवि का कोई विभाजन नहीं है। मेरा कवि, यदि उसे कभी सही रूप में देखा जाए, तो वह मेरे जीवन से जुड़ा, प्ररोहित, प्रादुर्भूत और उसका ही प्रक्षिप्त अंग प्रतीत होगा। अपने जीवन की चर्चा में मैं उसकी उपेक्षा नहीं कर सकता था। यदि मैं कहीं समझी जाने योग्य इकाई हूँ, तो मेरी कविता से मेरे जीवन और मेरे जीवन से मेरी कविता को समझना होगा। मुझे ऐसा स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है कि जैसे मेरी कविता आत्मकथा–संस्कारी है, वैसे ही मेरी आत्मकथा कविता–संस्कारी है।''

वे मानते हैं कि ''जीवन जो सहज भाव से करता है, साहित्य उसकी पकड़ और परिष्कार है। द्वारिका के कृष्णपुरी के जगन्नाथ हो गए–गलकर, पिघलकर।''

कवि–कलाकार स्वप्न और यथार्थ को भले ही अलग करके देखें, मुझे लगता है कि जीवन की पूर्णता में दोनों अविभाज्य रूप से सांगिक है– 'ऑरगेनिक'।

अपनी एक कविता 'न तुम सो रही हो, न मैं सो रहा हूँ /मगर यामिनी बीच में ढल रही है' की व्याख्या के प्रसंग में अपने प्रिय कवि डबल्यू. बी. ईट्स को उद्धृत करते हुए वे लिखते हैं कि ''कवि का क्षेत्र जीवन का आवर्त है, घेरा, वृत्त, प्रतीक रूप में प्रेयसी की जुल्फें–पेंचाँ, छल्लेदार कुंतल–राशि, जो घूम–घामकर उसी जगह आ जाए, जहाँ से चली थी, जैसे साँप अपने मुँह में अपनी पूँछ जकड़ ले और उससे एक वृत्त बन जाए।''

'बच्चन' अज्ञेय जी के द्वारा दी गई 'कविता' की परिभाषा का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि– ''कविता अर्थवान मूक क्षणों की वह श्रृंखला है, जो शब्दों की कड़ियों से जोड़ दी गई हो।''

कुल मिलाकर बच्चन के शब्दों में, ''कविता जीवन की प्रतिध्वनि है, जीवन कविता की प्रति ध्वनि नहीं है। कविता से कटा हुआ जीवन भी मूल्यवान है, जीवन से कटी हुई कविता निर्मूल आकाश–बेलि है।''

इससे यह ध्वनित होता है कि जीवन कविता हो सकता है, परंतु कविता जीवन नहीं, क्योंकि जीवन में वस्तु–सत्य होता है– जो सापेक्ष–सत्य होता है, जबकि ''साहित्य और कला का सत्य तो ऋत होता है (एब्सोल्यूटट्रूथ) –निरपेक्ष सत्य।''

जैसा कि कहा भी गया है– ''काव्य में यथार्थ और कल्पना का योग होता है, यह सर्वमान्य है। यहाँ कल्पना की भूमिका कम नहीं होती। मस्तिष्क के विकास में कल्पना जाग्रत करने वाले साहित्य का भी महत्वपूर्ण योग होता है, भले ही वह कल्पना कभी साकार न हो।''

काव्य गद्य एवं पद्य दोनों है, जिनमें शिल्पगत भिन्नता होती है। कहा जाता है कि अच्छा गद्य वह है, जिसमें पद्य की–सी लयात्मकता हो, और अच्छा पद्य वह है, जिसमें गद्य की–सी स्वच्छंदता हो। 'बच्चन' का मानना है कि ''पद्य के संयमन की कुछ शक्ति है, जिस पर गद्य की स्वच्छंदता को भी ईर्ष्या हो।''

'बच्चन' ने अपनी आत्मकथा में मूर्धन्य साहित्यकारों की व्यक्तिगत और काव्यगत सूक्ष्मताओं का भी स्पर्श किया है– तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', शिव पूजन सहाय, डबल्यू. बी.ईट्स, रवींद्रनाथ टैगोर, सुमित्रा नंदन पंत, नरेंद्र शर्मा, महादेवी वर्मा, शमशेर बहादुर सिंह, शिव मंगल सिंह सुमन, मक्सिमगोर्की आदि।

'बच्चन' कवि और अध्यापक ही नहीं, शोधकर्ता भी थे। यह शोध उनकी कविता –यात्रा में भी उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जितनी अकादमिक उपाधि की प्रतिपूर्ति में। ''सही शब्दों का शोध न तो सरल काम

है और न छोटी उपलब्धि–सच पूछो तो बहुत बड़ी उपलब्धि है। अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति के लिए शब्दों के चुनाव से ही कविता का आरंभ होता है और अंत होता है शब्दों के माध्यम से –सुंदरम, शिवम, सत्यम के शोध से।''

निष्कर्ष

सार यह है कि 'बच्चन' की आत्मकथा जीवन की समग्रता के साथ–साथ साहित्य की विभिन्न विधाओं में संश्लिष्टता को ही आत्मसात करती है। इसी कारण उनकी आत्मकथा से गुजरते हुए कभी कविता की सरसता, निबंध की वैचारिकता, समीक्षा की तार्किकता, विवेचनात्मकता एवं विश्लेषणात्मकता, कहानी की कुतूहलवर्धकता, नाटक की अभिनेयता, रिपोर्ताज की विवरणात्मकता, संस्मरण की स्मृति मधुरता आदि का आस्वादन होता चलता है।

संदर्भ सूची

1. *चतुर्वेदी, पंकज, (2003), आत्मकथा की संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।*
2. *बच्चन, हरिवंशराय, (2011), क्या भूलूँ क्या याद करूँ : आत्मकथा, भाग–1, राजपाल एंड संस, दिल्ली।*
3. *बच्चन, हरिवंशराय, (2011), नीड़ का निर्माण फिर, आत्मकथा, भाग–2, राजपाल एंड संस, दिल्ली।*
4. *बच्चन, हरिवंशराय, (2011), बसेरे से दूर, आत्मकथा, भाग–3, राजपाल एंड संस, दिल्ली।*
5. *बच्चन, हरिवंशराय, (2011), 'दशद्वार' से 'सोपान' तक, भाग–4, राजपाल एंड संस, दिल्ली।*

****